बिखरता परिवार दोषी कौन

परिवार की स्त्री की कितनी जिम्मेदारी

आज के समय की बहुत बड़ी समस्या है परिवार का बिखरना। किन्तु कौन है इसका जिम्मेदार?

पिछले कुछ वर्षों से एकल परिवार के बढ़ते प्रचलन ने **'वसुधैव कुटंबकम्'** को सर्वोपरि मानने वाले भारत देश में परिवार की परिभाषा को बदल डाला। पहले संयुक्त परिवार प्रणाली को छिन्न भिन्न कर एकल परिवार बने और अब एकल परिवार भी विखंडित हो रहे हैं।

बचपन से सुनती आ रही हूं कि स्त्री परिवार की धुरी होती है। एक ईंट पत्थर के मकान को घर बना उसमें प्राण फूंकने वाली स्त्री ही होती है।

संस्कृत की एक सूक्ति के अनुसार

‘न गृहम गृह मित्याहु गृहिणी गृह मुच्यते'

अर्थात एक इमारत घर नहीं कहलाती बल्कि गृहिणी ही घर है। क्योंकि गृहलक्ष्मी के घर में प्रवेश से ही परिवार का सृजन प्रारंभ हो जाता है। एक नारी टूटे-फूटे घर या झोपड़े को भी हास उल्लास से भर सकती है और महल में भी सन्नाटा बिखेर सकती है। क्योंकि वो ना सिर्फ घर का आरंभ करती है बल्कि उसका विस्तार, पोषण और विकास भी करती है। नारी एक ऐसा स्तंभ होती है जिस पर पूरा परिवार टिका होता है और इसके कमजोर पड़ते ही सब चरमराने लगता है। किन्तु क्या सिर्फ नारी ही दोषी है इस बिखराव की? क्या पुरुष प्रधान कहे जाने वाले हमारे इस समाज में

परिवार के निर्माण में पुरुष का कोई योगदान नहीं?

बहुत सारे कारण होते हैं एक परिवार के बिखरने के। प्रतिस्पर्धा और दिखावे की अंधी दौड़ में पड़कर हर व्यक्ति सिर्फ अपना स्वार्थ सिद्ध करना चाह रहा है। हम अपनी प्राथमिकताओं को भूल गए हैं। हम भूल गए हैं अपने उन उत्तर दायित्वों को जो एक स्वस्थ एवम् संस्कार युक्त परिवार की आधार शिला हैं। परिवार को मजबूत बनाने के लिए आपसी प्रेम और सामंजस्य बहुत महत्वपूर्ण होता है। क्या फायदा उस परिवार का जिसमें परिवार के सदस्य एक साथ एक छत के नीचे रहते तो है किन्तु उनके बीच किसी प्रकार का मानसिक और भावनात्मक जुड़ाव ना हो। क्या फायदा कि एक

ही रसोई में सभी का भोजन तो बनता है किन्तु एक साथ बैठकर खाने की फुरसत नहीं। क्या फायदा जब एक साथ रहते हुए भी परिजन अलग अलग जिंदगी जी रहे हों। मानती हूं कि परिवार को एकजुट रखने में घर की महिलाओं की भूमिका अति महत्वपूर्ण होती है। क्यूं कि परिवार की देखवाल के साथ साथ परिजनों के मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य के देखभाल की जिम्मेदारी भी महिलाओं की ही होती है। कहीं ना कहीं बच्चों में संस्कारों के बीज मां द्वारा ही रोपित किए जाते हैं शायद इसीलिए बच्चों की प्रथम पाठशाला परिवार और प्रथम गुरु मां को माना जाता है।

किन्तु परिवारों के बिखरने के कई और भी कारण हैं। जैसे कि दो दशक पूर्व उदारीकरण

के बाद आए सामाजिक बदलाव, जिसने संयुक्त परिवारों को विखंडित कर दिया। इसके अलावा बढ़ती इच्छाएं, स्वाबलंबन का अभाव, सहन शक्ति की कमी, ज्यादा से ज्यादा संग्रह की चाहत, छोटे घर और परिवार के मुखिया का दकियानूसी रवैया घर की महिलाओं के बीच तालमेल की कमी भी परिवारों के टूटने के कुछ ऐसे कारण हैं जिन्हें हम नजर अंदाज नहीं कर सकते।

परन्तु आज जब तलाक के केस दिन पर दिन बढ़ रहे हैं और एकल परिवार भी बिखर रहे हैं तो एक बार फिर परिवार की नारी पर प्रश्न चिन्ह लग जाता है। यदि हम विभिन्न कारणों पर गौर करें तो हम पाएंगे कि प्राचीन और मध्य काल में तो नारियां शिक्षा के अधिकार से वंचित

थीं किन्तु आज नारी शिक्षित है और उसकी सोच का दायरा भी विस्तृत हो गया है।

उसकी प्राथमिकताएं भी बदल गई हैं। पहले जहां घर की चारदीवारी के भीतर ही उसका पूरा संसार हुआ करता था, आज वो घर से बाहर निकाल रही है। आज नारी का नौकरी करना आधुनिकता के दायरे से निकल आवश्यकता के रूप में सामने आ रहा है। आधुनिक काल में जब पश्चिम देशों के नव जागरण के साथ सामाजिक उथलपुथल का दौर प्रारंभ हुआ तो हमारा देश भी उससे अछूता नहीं रह पाया और यहां भी सर्व सामान्य रूप से ये स्वीकृत किया गया कि नारियों की प्रगति के बिना सामाजिक विकास अधूरा है। आर्थिक रूप से स्वतंत्र नारी जब घर से बाहर की दुनिया से रूबरू

होती है तब वह अनेक प्रकार की सामाजिक, राज नैतिक, धार्मिक और आर्थिक चुनौतियों का सामना करती है। नारी का बौद्धिक और आत्मिक धरातल पर विकास होता है। नौकरी में समय समय पर दी जाने वाली ट्रेनिंग से कार्य कुशलता में वृद्धि होती है। इससे नौकरीपेशा नारियों में एक प्रकार की सकारात्मक सोच भर जाती है। उन्हें घर के छोटे मोटे झगड़े, सास बहू का विवाद, ननद भौजाई का मनमुटाव अब तुच्छ लगने लगते हैं। आज यदि एक सुशिक्षित और आत्म निर्भर नारी पूरे दिन पुरुषों के कंधे से कंधा मिला कर काम करती है तो उसकी भी अपेक्षा होती है कि उसे पुरुषों के बराबर का सम्मान मिले, उसके स्वाभिमान की रक्षा हो और इस दोहरी भूमिका को निभाने के

लिए सबका साथ मिले। स्त्री चाहे कामकाजी हो या गृहिणी, परिवार चाहे संयुक्त हो या एकल, परिवार को सहेजने और एकजुट रखने की जिम्मेदारी सिर्फ घर की महिला की नहीं होती यदि सभी अपनी अपेक्षाओं का बोझ उसके कंधे पर डालेंगे तो वह चाहे कितनी भी मजबूत क्यों ना हो अंदर ही अंदर कमजोर पड़ने लगेगी। और याद रहे कि बिखराव की यह स्थिति एक क्षण में पैदा नहीं होती बल्कि ये नतीजा होती है सालों तक एक दूसरे को सहन करने का। और जब सहन शक्ति की पराकाष्ठा हो जाती है तब वो निर्णय लेती है विखंडन का, ताकि अपने स्वाभिमान को जीवित रख सके। बहुत आत्म मंथन करने के बाद मुझे ऐसा महसूस हुआ कि कदाचित परिवार को

एकजुट रखने की तीव्र चाह ही भावुक और कोमल हृदया नारी को परिवार के बिखरने के अपराध बोध से ग्रस्त कर देती है।

हमारा समाज चाहे कितनी भी प्रगति क्यों ना कर ले ये कुछ ऐसे तथ्य हैं जो ना सिर्फ भारत बल्कि सम्पूर्ण विश्व की नारियों पर तर्क संगत हैं। यदि परिवार का निर्माण स्त्री और पुरुष दोनों मिल कर करते हैं तो उसे सुचारु रूप से चलाने की जिम्मेदारी भी दोनों की ही है। याद रहे कि एक अच्छा परिवार ही एक आदर्श समाज की बुनियाद होता है जो एक महान राष्ट्र का निर्माण करता है।

प्रेषक -

मीनू नवनीत भट्टड़,

३०२, रतन अपार्टमेंट-४, गणेशपेठ,

नागपुर ४४००१८

प्रदेश – विदर्भ

मोबाइल ९८२२९४३८४६